International Journal of Applied Research 2017; 3(5): 110-113

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(5): 110-113
www.allresearchjournal.com
Received: 17-03-2017
Accepted: 18-04-2017

डॉ0 उत्तम सिंह
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

Correspondence
डॉ0 उत्तम सिंह
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

नागरिक समाज, भूमण्डलीकरण और इसके प्रभाव

डॉ0 उत्तम सिंह

आज जिस तरह से नागरिक समाज को लेकर वाद–विवाद उठा है तथा उसकी व्यवस्था को लोकतांत्रिक प्रणाली में प्रश्नगत करने की कोशिशें हो रही हैं, उसमें पं0 नेहरू के इस कथन कि "सच्चा लोकतंत्र व्यक्ति के विवेक को पूरी मान्यता देता है" की प्रासंगिकता और बढ़ जाती है। नागरिक समाज या जनमत, जिसे कि हम 'सॉफ्ट पॉवर' कहते हैं, यदि आहत न होता तो देश में आक्रोश और असंतोष का मौजूदा परिदृश्य ही न पैदा होता जैसा कि अन्ना हजारे इत्यादि। जाहिर है कहीं न कहीं लोकतांत्रिक मूल्यों के संरक्षण में चूक हुई है।

वस्तुतः यह कोई नई बात नहीं है। प्राचीन ऐतिहासिक काल से आज तक विश्व में सत्ता के विभिन्न स्वरूपों से संबंधित इतिहास का अवलोकन किया जा सकता है। इन समस्त प्रकार की सत्ताओं में प्रजा की भी एक ऐतिहासिक भूमिका रहीं है। विभिन्न शासकों के मध्य अपने को अधिक शक्तिशाली एवं प्रभावशाली सिद्ध करने की प्रतिस्पर्धाओं में अनेक युद्धों में बल प्रदर्शन किया गया है।[1] अधिकांश लोग किसी भी राज्य की शक्ति का अर्थ उसकी सैन्य शक्ति को ही मानते हैं, विशेषतया दो राष्ट्रों के संदर्भ में मात्र इसी सैन्य शक्ति के द्वारा ही शक्ति समीकरणों का निर्धारण होता रहा है। परन्तु इतिहास में ऐसे भी अनेक दृष्टांत मिलते हैं, जहां किसी भी शासक को अपनी ही प्रजा का विरोध झेलना पड़ा है और प्रजा की शक्ति समय–समय पर उभर कर सामने आती रही है। प्रजा की यही शक्ति एक नई शक्ति है जिसे आज 'साफ्ट पॉवर' की संज्ञा दी जा रही है।[2]

यदि साफ्ट पॉवर के रूप में एक नई शक्ति की पहचान करनी है तो यह भारतवर्ष में उपलब्ध है। विगत कुछ माह में घटने वाली घटनाओं ने शब्दों एवं दृश्यों के माध्यम से इस साफ्ट पॉवर के भीषण प्रभाव को दर्शाया है। प्रश्न यह नहीं है कि ऐसा करना उचित है अथवा अनुचित तथा इसका परिणाम क्या होगा वरन् प्रश्न यह है कि इन समस्त अभूतपूर्व कदमों के पीछे क्या कारण निहित है? निश्चित रूप से सरकार के अंदर बैठे हुये निर्णय कर्ताओं ने इस सॉफ्ट पॉवर के दबावों को भलीभांति महसूस किया है। शासन व्यवस्था पर सिविल सोसायटी यानी नागरिक समाज के नियंत्रण की अवधारणा निरंतर बलवती हुई है, यही कारण है कि इन दिनों नागरिक समाज (सिविल सोसायटी) की जमकर चर्चा हो रही है। थॉमस हॉब्स ने अपनी पुस्तक 'लेवियाथन' में लिखा कि सिविल सोसायटी और सरकार अथवा सार्वभौम के बीच अनुबंध (कांट्रैक्ट) हो जाने के बाद नागरिकों के सारे अधिकार समाप्त हो जाते हैं। हॉब्स का मानना था कि प्राकृतिक अवस्था में व्यक्ति हमेशा मौत एवं असुरक्षा के साये में जीता है, क्योंकि मनुष्य का जीवन छोटा, स्वार्थी तथा पाशविक होता है। ऐसी स्थिति में हर व्यक्ति का हर व्यक्ति के साथ युद्ध होता रहेगा। इसलिए इस प्राकृतिक अवस्था को सिविल सोसायटी में बदलने की जरूरत है। इसमें व्यवस्था बनाए रखने के लिए एक मजबूत सार्वभौम की जरूरत है। अपनी सुरक्षा के बदले में नागरिक अपने अधिकारों को समर्पित करता है। केवल एक स्थिति में हॉब्स ने किसी व्यक्ति को राज्य के विरुद्ध विद्रोह करने की छूट दी है। यदि किसी की जान को राज्य से ही खतरा हो तो वह विद्रोह कर सकता है। जॉन लॉक ने सिविल सोसायटी की महती भूमिका पर बल देते लिखा है कि सार्वभौम की सत्ता पर नागरिक समाज का नियंत्रण होना चाहिए जो उसे शक्ति प्रदान करता है। हीगल का मत था कि समाज के विकास में तीन चरण होते हैं–परिवार, सिविलसोसायटी एवं राज्य। परिवार परमार्थ की भावना पर आधारित संस्था है, जिसमें एक–दूसरे का ख्याल रखा जाता है, परंतु यह परमार्थ बहुत सीमित संदर्भ में होता है। दूसरा चरण है सिविल सोसायटी जो ज्यादा व्यापक होता है, किन्तु इसमें अलग–अलग वर्गों एवं गुटों के हितों का टकराव होता है, जिसे रोकने के लिए राज्य की जरूरत होती है। इसलिए हीगेल की दृष्टि में राज्य आदर्श स्थिति है। मार्क्स ने नागरिक समाज एवं राज्य दोनों को अपूर्ण माना।

आज देश में नागरिक समाज की भूमिका को लेकर बहस छिड़ी हुई है कि कानून बनाने में उसके प्रतिनिधि की क्या भूमिका हो सकती है, जबकि देश में उसके लिए निर्वाचित विधायिका है। 'जन लोकपाल विधेयक प्रारूप समिति' के अध्यक्ष प्रणव मुखर्जी ने कहा है कि सिविल सोसायटी के कुछ वर्गो ने लोकतांत्रिक संस्थाओं को नुकसान पहुंचाया। यह सही है कि संवैधानिक योजना के तहत कानून बनाने की प्रक्रिया में नागरिक समाज की सीधी भागीदारी नहीं है। यदि जरूरत महसूस हो तो संसदीय समितियाँ विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधियों के साथ विचार विमर्श कर सकती हैं। कुछ देशों में नागरिक समाज की सीधी सहभागिता का कानूनी प्रावधान है। स्विट्जरलैंड में लोकतंत्र में जनता की भागीदारी के लिए तीन संस्थाएं हैं–प्रारंभिक प्रयास (इनिशिएएिटव), जनमत संग्रह एवं प्रतिनिधि वापस बुलाने का अधिकार। प्रारंभिक प्रयास के अन्तर्गत नागरिक कोई कानून बनाने के लिए स्वयं कारवाई शुरू कर सकते हैं। इसके लिए जनसंख्या का एक खास प्रतिशत हस्ताक्षर कर यह प्रक्रिया शुरू कर सकता है। जनमत संग्रह के तहत किसी खास कानून या मुद्दे पर जनता की राय ली जाती है। इसके साथ ही जनता को प्रतिनिधि वापस बुलाने का अधिकार है।

ऐसा कोई प्रावधान भारतीय संविधान में नहीं है, जहां सिविल सोसायटी की अहम् भूमिका रही हो, हालांकि उसको लेकर विवाद भी शुरू से रहा है। कल भी था और आज भी है। महात्मा गांधी जो कि सिविल सोसायटी के प्रबल पक्षधर थे, को भी इसे लेकर विरोध का सामना करना पड़ा था। जब गांधीजी ने असहयोग आंदोलन शुरू किया तो रवींन्द्र नाथ टैगोर ने इसका विरोध किया कि इससे अराजकता फैलेगी। गांधीजी, टैगोर को समझाने शांति निकेतन गए, किन्तु वह गांधीजी के विचार से सहमत नहीं हो पाए। उनका मानना था कि इसके बजाय शिक्षा का प्रसार होना चाहिए। कांग्रेस के नेता एवं पटना के मशहूर बैरिस्टर हसन इमाम भी असहयोग के विरुद्ध थे। उन्हे समझाने भी गांधी जी पटना गए, किन्तु उन्होंने भी गांधीजी के तर्कों को नहीं माना। ऐनी बेसेंट ने तो सविनय अवज्ञा का खुलकर विरोध किया था। गांधीजी नागरिक समाज के बहुत बड़े समर्थक थे और सरकार के ऊपर उसका नैतिक नियंत्रण बनाए रखने के पक्षधर थे। उन्हें जनता का व्यापक समर्थन प्राप्त था। वैसे अपने आंदोलनों में वह कांग्रेस पार्टी की मदद तब भी लेते रहे जब वह कांग्रेस के सदस्य तक नहीं रह गए थे क्योंकि आंदोलन चलाने के लिए संगठन तथा कैडर की जरूरत होती है। अंबेडकर ने संविधान सभा में असहयोग एवं सविनय अवज्ञा के तरीकों को खारिज कर दिया कि स्वाधीन भारत में अपनी ही सरकार के विरुद्ध इसके इस्तेमाल की जरूरत नहीं है किन्तु इस विचार से सहमत होना मुश्किल है क्योंकि अपनी सरकार के विरुद्ध भी आंदोलन होते हैं। ह्यूम ने सवाल उठाया था कि किसी भी लोकतंत्र में कानूनों के पीछे जो बल होता है वह है आम आदमी का मत, परन्तु क्या आम आदमी कानून बनाता है? इसलिए किसी ने कहा था कि लोकतंत्र हर मतदाता को अपने ऊपर अत्याचार करने का अवसर देता है। लड़ाई उसी अत्याचार के विरोध में शुरू हो चुकी है। भ्रष्टाचार पर देश की जनता में एक सामान्य रोष साफ दिख रहा है। सरकार का भ्रष्टाचार के संबंध में आवश्यकता से अधिक सहनशील होना भी जनाक्रोश का कारण बन रहा है। राष्ट्रीय महत्व के मुद्दों की अनदेखी जिस प्रकार से की जा रही है, उसे देखते हुए नागरिक समाज की यह नैतिक जिम्मेदारी बनती है कि वह जन दवाब के जरिये सरकार को दिशा बोध कराए। एक अनुशासित सरकार के लिए जनमत द्वारा सरकार पर प्रतिरोधी दबाव डालना, न तो अनुचित है और न ही यह किसी प्रकार की अराजकता के दायरे में आता है। यह तो एक स्वस्थ लोकतंत्र की पहचान है। भारत में इससे पहले भी जनांदोलन हुए हैं।

आज के संदर्भों में सूचना और संचार के क्षेत्र में आई क्रान्ति ने नागरिक समाज के हाथ मजबूत किए हैं। हाल में इसके सकारात्मक प्रभाव भी सामने आए हैं। यकीनन संचार क्रान्ति के कारण भारत ही नहीं, दूसरे देशों के अंदर शक्तिशाली हो रही साफ्ट पॉवर की महत्वपूर्ण होती जा रही भूमिका पर संदेह नहीं किया जा सकता, जिसके उदाहरण भारत, ट्यूनिशिया तथा मिस्र जैसे राष्ट्रों में हाल में ही स्पष्टतः दृष्टिगोचर हुए हैं। साफ्ट पॉवर के रूप में इन जन–आंदोलनों को समुदायों द्वारा संगठित संस्थाओं/सिविल सोसायटी संगठनों तथा संचार माध्यमों के द्वारा शक्ति प्रदान की जा रही है। जहाँ तक संचार माध्यमों का संबंध है सामाजिक संचार माध्यम, तकनीक संचालित नेटवर्किंग प्लेटफार्म जैसे फेसबुक, ट्विटर, ब्लॉग, एसएमएस तथा एमएमएस इत्यादि[3] के साथ जुड़ने एवं संपर्क बनाये रखने का आसान एवं मितव्ययी तरीका हाथ लग चुका है। आज किसी भी व्यक्ति को 'प्रसारक' (अपनी बात हजारों लाखों लोगों तक शब्दों, आवाजों एवं वीडियों दृश्यों के माध्यम से पहुंचा सके) के रूप में स्वयं को स्थापित करना अत्यंत सुविधाजनक हो चुका है तथा इसके परिणामस्वरूप शक्ति समीकरणों में भी परिवर्तन हो रहा है। आज संगठित संस्थाओं, प्रसारण निगमों अथवा सरकार के द्वारा सूचनाओं में नियंत्रति करना अथवा उनमें हेरफेर करना तथा एकमात्र सूची प्रसारक बने रहना संभव नहीं रह गया है।[4]

इसके अतिरिक्त तकनीकी सहायता आधारित नेटवर्किंग द्वारा क्षणिक समयावधि में लगभग एक साथ आभासी संगठनों का निर्माण किया जा सकता है अथवा एक साथ हजारों, लाखों लोगों को लामबंद किया जा सकता है, जिसका उदाहरण तहरीर स्कवायर तथा जंतर–मंतर पर हाल ही में देखने को मिला। टेलीविजन तथा विशेषतया 24 घंटे निरंतर चलते रहने वाले समाचार चैनलों को आज नई खुराक की आवश्यकता बढ़ती जा रही है जिसे वे जनता के समक्ष परोसते रहते हैं। इन चैनलों की भूख एवं पहुंच भी शहरों तथा ग्रामों के साथ–साथ आज संपूर्ण विश्व के दुर्गम क्षेत्रों तक हो चुकी है। जब भी कभी यह संचार माध्यम किसी भी विषय पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं तो इसके द्वारा प्रसारित सामग्री का प्रभाव अत्याधिक विस्तृत होता है। वृहद् जनसंख्या की तकनीक आधारित लामबंदी (भौतिक एवं आभाषी) एवं समाचार चैनलों पर उसके जीवंत प्रसारण के द्वारा अत्यधिक विस्फोटक वातावरण तैयार होता है तथा साथ ही यह एक–दूसरे को समस्त तथ्यों सेअद्यतन अवगत कराने की भी भूमिका निभाते हैं। इस स्थिति का भरपूर लाभ नागरिक समाज को मिल रहा है। इसमें कोई दो राय नहीं कि अपनी क्षणिक लामबंदी एवं आंदोलन करवाने की योग्यता में समर्थ आज की तकनीक ने सिविल सोसायटी संगठनों को एक जोरदार प्रहारक शक्ति प्रदान की है।[5] आज इसके प्रति सरकारें जागरूक हो रही हैं और प्रायः उन्हें बड़े झटकों का सामना भी करना पड़ रहा है। अब सरकार को जनमत की शक्ति का एहसास होने लगा है।

सरकार के साथ–साथ व्यावसायिक जगत को भी इस नई शक्ति को भलीभांति समझने की आवश्यकता है। दीर्घकाल से व्यावसायिक जगत का इन सिविल सोसायटी संगठनों के साथ संरक्षक अथवा विरोधी की भूमिका होने का संबंध रहा है। कुछ लोगों की धारणा है कि सिविल सोसायटी संगठन मात्र व्यावसायिक जगत के सिविल दायित्व हेतु प्रावधान किये गये बजट की धनराशि को प्राप्त करने के संगठनमात्र रहे हैं तथा कंपनियों की वार्षिक रिपोर्ट में उनकी फोटो छापे जाने से अधिक इनका कुछ भी महत्व नहीं होता। कुछ लोगों ने इन सिविल सोसायटी संगठनों को संशय की दृष्टि से देखा है और वह यह भी मानते हैं कि ये लोग उत्पात खड़ा करने वाले लोग हैं, जिनसे दूर रहा जाना चाहिये। हालांकि जैसे–जैसे इन संगठनों एवं वातावरण पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है तथा भूमि एवं मानवाधिकार संबंधी विषय प्रमुखता से उठाये जा रहे हैं, व्यावसायिक जगत को इन सिविल सोसायटी संगठनों को अपने व्यावसायिक भागीदारों में सम्मिलित करना होगा। प्रायः कंपनियों में सरकारी तंत्र के साथ पड़ने वाले कार्य को संभालने हेतु उच्च

स्तरीय अधिकारी नियुक्त किये जाते हैं परंतु अब उन्हें सिविल सोसायटी संगठनों के साथ भी निपटना पड़ेगा। इसके लिये सोच में परिवर्तन की आवश्यकता है। नये परिदृश्य में कंपनियों को इन सिविल सोसायटी संगठनों के साथ निपटने की नई रणनीतियों का विकास करना होगा तथा उन्हें अपने वार्षिक लेखों के संलग्नक अथवा विरोधी मानने के स्थान पर अपना साझीदार बनाना पड़ेगा।

लोकतंत्र में सिविल सोसायटी की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। वह लोकतंत्र ही कैसा, जो नागरिक समाज की अनदेखी करे। नागरिकों के हितों की अनदेखी करने वाले का तो सामाजिक बहिष्कार होना ही चाहिए। हम तो लोकतंत्र में जी रहे हैं, राजा पर जनमत के नियंत्रण की अवधारणा को तो राजतंत्र तक में मान्यता मिली थी[6]। आचार्य कौटिल्य का भी यह मानना था कि राजा पर जनमत का नियंत्रण (Public Opinion's Control) होना चाहिए, वह जनमत का अवहेलना नहीं कर सकता। यही कारण है कि राजतिलक के समय राजा को शपथ दिलाई जाती थी कि वह लोक इच्छा का सम्मान करते हुए लोकहित में काम करेगा। जनमत को तो ऋग्वेद की ऋचाओं तक में स्थान दिया गया है। एक ऋचा के अंतर्गत गणतंत्र की मुखर भावना को कुछ इस तरह से व्यक्त किया गया है–''तुम्हारे उद्देश्य एक हों, तुम्हारे मन एक हों, तुम्हारे विचार एक हों, ताकि तुम सब पूरी तरह एकता के सूत्र में बंध जाओ।'' ऋग्वेद में गणतंत्र की यह मुखर अभिव्यक्ति आज के नागरिक समाज के लिए प्रासंगिक है। नागरिक समाज ने जनमत के द्वारा शासन पर नैतिक नियंत्रण की जो प्रवृत्ति विकसित की है, वह ऐसा संतुलित परिवर्तन लाएगी, जिसकी आधारशिला पारदर्शिता होगी। शैक्सपीयर के अनुसार 'निर्भय मन वाले ही गौरव शिखर पर सबसे पहले पहुंचकर गौरव का मुकुट पहनते हैं।'

'भूण्डलीकरण' शब्द व्यापार अवसरों की जीवंतता एवं उनके विस्तार का द्योतक है। यह वस्तुतः व्यापारिक क्रियाकलापों, विशेषकर विपणन संबंधी क्रियायों का अंतर्राष्ट्रीयकरण करना है जिसमें संपूर्णविश्व बाजार को एक ही क्षेत्र के रूप में देखा गया है। दूसरे शब्दों में, भूमंडलीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें विश्व बाजारों के मध्य पारस्परिक निर्भरता उत्पन्न होती है और व्यापार देश की सीमाओं में प्रतिबंधित न रहकर विश्व व्यापार में निहित तुलनात्मक लागत लाभ दशाओं का विदोहन करने की दिशा में अग्रसर होता है। भूमंडलीकरण का अर्थ पूर्ण रूप से पारस्परिक संबद्ध विश्व बाजार के विभिन्न देशों में व्यापार के उदारीकरण, पूंजी निवेश तथा सेवाओं की प्रचुरता के कारण बाजारों में संबंध करना पड़ता है। भूमंडलीकरण एकरूपता एवं समरूपता की वह प्रक्रिया है जिसमें संपूर्ण विश्व सिमटकर एक हो जाता है।[7] एक देश की सीमा से बाहर अन्य देशों में वस्तुओं एवं सेवाओं का लेन–देन करने वाले अंतर्राष्ट्रीय निगमों अथवा बहुराष्ट्रीय निगमों के साथ देश के उद्योगों की संबद्धता भूमंडलीकरण है। इसमें निम्नांकित तत्व सम्मिलित होते हैं :

1. संसार के विभिन्न देशों में बिना किसी अवरोध के विभिन्न वस्तुओं का आदान–प्रदान संभव बनाने के लिए व्यापार अवरोधों को कम करना।
2. आधुनिक प्रौद्योगिकी का निबार्ध प्रवाह संभव बनाने हेतु उपयुक्त वातावरण बनाना।
3. विभिन्न राष्ट्रों में पूंजी का स्वतंत्र प्रवाह संभव बनाने हेतु आवश्यक परिस्थितियाँ पैदा करना।
4. संसार के विभिन्न देशों में श्रम का निर्बाध प्रवाह संभव बनाना।

संक्षेप में, भूमंडलीकरण राष्ट्रों की राजनीतिक सीमाओं के आर–पार आर्थिक लेन–देन की प्रक्रियाओं और उनके प्रबंधन का प्रवाह है। विश्व अर्थव्यवस्था में आया खुलापन, आपसी जुड़ाव और परस्पर निर्भरता के फैलाव को भूमंडलीकरण कहा जाता है। इसे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण की प्रक्रिया भी कहा जा सकता है।[8]

भूमंडलीकरण की कुछ ऐसी विशेषताएं हैं जिससे ऐसा लगता है कि एक नए प्रकार की अतंर्राष्ट्रीय राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था की स्थापना की तरफ हम प्रवृत्त हो रहे हैं। ये विशेषताएं इस प्रकार हैं :

प. यातायात और संचार साधनों में हुए क्रांतिकारी विकास के चलते भौगोलिक दूरियां सिमट गयी हैं। अब न केवल व्यापार, तकनीकी एवं सेवा क्षेत्र बल्कि लोगों का भी सीमा पार आवागमन सस्ता एवं सुगम हो गया है। कम्प्यूटर और इंटरनेट भी तेजी से दुनिया को जोड़ रहा है।

पप. इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की दूरराज पहुंच ने एक ग्लोबल संस्कृति की स्थापना कर दी है। जीन्स, टीशर्ट, फास्ट फूड, पॉप संगीत, हालीबुड फिल्म एवं सैटेलाइट टेलीविजन की संस्कृति आज के हर नवयुवक की संस्कृति है। चाहे वह दुनिया के किसी भी कोने से हो। "उपभोक्तावाद भी आज एक तरह से समूचे विश्व की संस्कृति बन गया है। इतना ही नहीं, भ्रष्टाचार एवं अपराध करने के तरीके भी अब सारे विश्व में एक हो गए हैं।"[9]

पपप. श्रम बाजार की मांगों को पूरा करने के कई व्यवस्थित माध्यम तैयार हो गए हैं। श्रम नियंत्रक देशों में ऐसे कई ब्रोकर एवं एजेंट सक्रिय हैं जो वैध एवं अवैध दोनों तरीकों से लोगों को विदेशों में काम दिलाते हैं। श्रम आयातक देशों में पुराने प्रवासियों के ऐसे नेटवर्क है जो नए प्रवासियों का दिशा–निर्देश तथा इनकी हर संभव सहायता करते हैं।

पअ. शिक्षा का भूमंडलीकरण हो गया है। अमेरिका जैसे औद्योगिक देश में उच्च शिक्षा प्राप्त करने जो विदेशी विद्यार्थी जाते हैं, उनमें अधिकांश तो वहीं रह जाते हैं। दूसरी तरफ आज उनके विकासशील देशों के शिक्षा संस्थानों के पाठ्यक्रम भी विश्वस्तरीय हो गए हैं जिससे यहां शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थी विश्व में कहीं भी रोजगार पा सकते हैं।

अ. ब्रेनड्रेन से शुरू हुई पेशेवरों की आवाजाही ने काफी जोर पकड़ लिया है। आज वैज्ञानिक, डॉक्टर, इंजीनियर और शिक्षाविद् तो विदेशों की तरफ खिंच ही रहे हैं। साथ ही वकील, वास्तुविद्, एकाउंटेट, प्रबंधक, बैंकर एवं कम्प्यूटर विशेषज्ञ आदि का विदेश आवागमन भी अब पूंजी प्रवाह की तरह लचीला हो गया है।[10]

अप. बहुराष्ट्रीय कंपनियां, जिनके जरिए पहले उत्पादित वस्तुओं, सेवा, तकनीक, पूंजी आदि की आवाजाही होती थी, आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर रोजागार प्रदायक की भूमिका निभा रहे हैं। भिन्न–भिन्न देशों से विशेषज्ञों, प्रबंधकों, कुशल–अर्द्धकुशल श्रमिकों आदि की नियुक्ति इन निगमों द्वारा की जाती है। इन नियुक्त कर्मचारियों को दुनियाभर में फैले निगम की विभिन्न शाखाओं में नियुक्त किया जाता है। इस तरह यह प्रक्रिया भी श्रम प्रवाह हो बढ़ा देती है। यू0एन0डी0पी0 की 'Human Development Report' में भूमंडलीकरणके तीन कर्ताओं का उल्लेख किया गया है। प्रथम है–'विश्व व्यापार संगठन' जो सदस्य देशों की राष्ट्रीय सरकारों के ऊपर अपना वर्चस्व एवं प्रभुता रखता है। द्वितीय कर्ता है–बहुराष्ट्रीय कंपनियां जिनकी आर्थिक क्षमता अनेक राष्ट्र राज्यों की कुल संपत्ति से ज्यादा है तथा तृतीय कर्ता अंतरराष्ट्रीय गैर–सरकारी संगठन जिनका ताना–बाना समुचे विश्व में फैला हुआ है। ये तीनों मिलकर भूमंडलीकरण को अपनी इच्छित दिशा देते हैं।

भारत में सुधार कार्यक्रम को आरंभ हुए डेढ़ दशक हो चुके हैं। नब्बे के दशक से देश में उदारीकरण का जो दौर शुरू हुआ और विश्व बाजारवाद के लिए जो नीतियां बनीं व जिस तरह नई आर्थिक नीति के नाम पर भारतीय बाजार के दरवाजे खोले गए उसके कई परिणाम देखने को मिले। अर्थशास्त्री किसी अर्थव्यवस्था की संवृद्धि का मापन सकल घरेलू उत्पाद द्वारा करते हैं। 11वीं पंचवर्षीय योजना में 10 प्रतिशत की संवृद्धि दर के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कृषि, उद्योग और सेवाओं में बेहत्तर

प्रदर्शन की आवश्यकता होगी। वैसे कई विशेषज्ञों ने इतनी उच्च संवृद्धि दरों के प्रक्षेपणों की व्यावहारिक धारणीयता को लेकर प्रश्न भी उठाए हैं।

अर्थव्यवस्था के खुलने से प्रत्यक्ष विदेशी निवेश तथा विदेशी विनिमय रिजर्व में तेजी से वृद्धि हुई है।[11] विदेशी निवेश (जिसमें प्रत्यक्ष और संस्थागत विदेशी निवेश दोनों ही सम्मिलित है) 1990–91 के 100 मिलियन अमेरिकी डॉलर से ऊपर उठकर 2003–04 में 150 अबर डॉलर के स्तर पर पहुंच गया। भारत के विदेशी मुद्रा भंडार का आकार भी इसी अवधि में 6 अरब अमेरिकी डालर से बढ़कर 2004–05 में 125 अरब डॉलर से अधिक हो गया। इस समय भारत विदेशी मुद्रा भंडार का छठा सबसे बड़ा धारक माना जाता है।

अब भारत वाहन, कल–पुर्जों, इंजीनियरी उत्पादों, सूचना प्रौद्योगिकी उत्पादों और वस्त्रादि के एक सफल निर्यातक के रूप में विश्व बाजार में जम गया है। बढ़ती हुई कीमतों पर नियंत्रण भी रखा गया है। दूसरी ओर सुधार कार्यक्रमों द्वारा अपने देश की अनेक मूलभूत समस्याओं का समाधान खोज पाने में विफलता के कारण कड़ी आलोचना भी होती रही है। ये समस्याएं विशेषकर रोजगार सृजन, कृषि, उद्योग, आधारभूत, सुविधाओं के विकास तथा राजकोषीय प्रबंधन से जुड़ी है।[12]

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि राष्ट्रीय सम्प्रभुताएं एक तरह से सीमाविहीन होने लगी है। विभिन्न देशों की सीमाओं का अब सिर्फ भौगोलिक महत्व रह गया है। जब दुनिया ही सिकुड़कर एक गाँव (Global village) बन गई है। भूमण्डलीकरण ने विभिन्न जातियताओं, नस्लों और अस्मिताओं को एक नई तरह की गतिशीलता और सतर्कता प्रदान की है। ऐसे में सिविल सोसाइटी के लोगों द्वारा अपनी अस्मिता, अखण्डता को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए दृढ़ संकल्प एवं जागरूक होना होगा तभी इस भूमण्डलीकरण युग में अपनी वास्तविकता एवं अस्तित्व को बचा पाना संभव है।

संदर्भ

1. साहित्य, समाज और जनतंत्र : प्रफुल्ल कोलाख्यान, आनन्द प्रकाशन 2003, पृ0 165।
2. वही, पृष्ठ 187।
3. संक्रमण की पीड़ा एवं भौतिक विकास–श्यामाचरण दुबे, पृ0 62।
4. समय और संस्कृति–श्यामाचरण दुबे, द्वितीय संस्करण 2000, पृ0 39।
5. वहीं, पृ0 45।
6. स्वातंत्र्योत्तर समाजशास्त्र (लेख) पूरनचन्द्र जोशी, पृ0 78।
7. भूमण्डलीकरण के कैदी : गिरीश मिश्र, पृ0 166।
8. भारत का भूमण्डलीकरण : अभय कुमार दुबे, पृ0 27।
9. वैश्वीकरण एवं समाज : रवि प्रकाश पाण्डेय, पृ0 154।
10. Globalization: To what and? Herry Madgoff, 6-7.
11. Globalization: Thomas Fridman. 11.
12. Globalization Social Theory & Global Culture: R. Robertson, 8.